B.Ed.part =1,paper-Vlll B,
Presented by Dr.Pallavi,
Topic- प्राणायाम (Pranayam)(प्राणायाम की संकल्पना (concept of Pranayam),प्राण के प्रकार (Kinds of Prana),नाडियो में प्राण का महत्व (Importance of pranab in Nari)

4.1 प्रस्तावना (Introduction)
प्राणायाम दो शब्दों से मिलकर बना है- प्राण तथा आयाम; यानि प्राण का आयाम । आयाम का अर्थ विस्तार, यानि प्राण का विस्तार करना। प्राण वह वायवीय शक्ति है जो पूरे ब्रह्मांड में व्याप्त है। प्राणायाम अष्टांग योग की चौथी सीढ़ी है। प्रस्तुत अध्याय में प्राणयाम को भली-भाँति समझाने का प्रयास किया गया है।

4.2 प्राणायाम की संकल्पना (Concept of Pranayam)

प्राणायाम में मुख्य रूप से श्वसन क्रिया तथा श्वसन क्रिया पर विभिन्न प्रकार से नियंत्रण को माना जाता है। श्वसन क्रिया पर ध्यान देना,
श्वसन क्रिया को ठीक करना तथा रखना, जिसमें सम्पूर्ण अंगों में प्राण वायु का प्रवाह ठीक प्रकार हो, इसके लिए अपनाई गई क्रिया प्राणायाम के अंतर्गत आता है।

योग की यह प्रक्रिया योगी को बाह्य से अंत:मन की ओर ले जाता है। यह स्थूल से सूक्ष्म की ओर ले जाती है। यम तथा नियम मनुष्य के विचारों का दायरा ,समाज तथा परिवार से समेट कर स्वयं पर लाता है। आसन अभ्यास के द्वारा शरीर की शक्तियों को बढ़ाता तथा जगाता है। यह शरीर को हर परिस्थिति तथा स्थिर सुखपूर्वक घंटों स्थिर रहना सीखाता है। इसके अभ्यास से हम शरीर के विभिन्न अंगों पर केन्द्रित कर पाते हैं । अब प्राणायाम के माध्यम से श्वसन क्रिया को ठीक करने तथा उसके माध्यम से ब्रह्म से जुड़ने की प्रक्रिया का अध्ययन करेंगें ।

प्राणायाम हमें स्थूल शरीर से सेक्ष्य शरीर की ओर ले जाता है। चिकित्सा विज्ञान के अंतर्गत शरीर के अंदर प्रवेश करना चाहें, तो चीर-फाड़ का मार्ग अपनाना पड़ेगा। परन्तु प्राणायाम सूक्ष्म शरीर तक पहुंच जाता है। यह सूक्ष्म शरीर तक पहुँच जाता है। यह सूक्ष्म शरीर को चलाता है, और अपनी अभिव्यक्ति स्थूल शरीर द्वारा ही करता है। परन्तु सूक्ष्म शरीर के स्तर तक श्वसन मार्ग को साधकर ही जाया जा सकता है। स्थूल रूप में हम श्वसन प्रणाली से जुड़े हैं। हम जो हर क्षण साँस लेते या छोड़ते हैं, यह उस प्राण के प्रवाह की अभिव्यक्ति है, जो सूक्ष्म शरीर की नाड़ियों में प्रवाहित होती है अत: सूक्ष्म शरीर तक पहुँचने के लिए हम श्वासन-प्रश्वास की सहायता ले सकते हैं। यह सूक्ष्म स्तर तक पहुँचने का मार्ग बन जाता है।

1.3 प्राण के प्रकार (Kinds of Prana)

हमारा प्राणमय कोश अनेक कोष्ठकों में विभक्त है। शारीरिक स्तर पर ये वायु के रूप में व्यक्त होते हैं। हम यहाँ पाँच मुख्य प्राण वायुओं की चर्चा कर रहे हैं। उनमें से प्रत्येक का अपना क्षेत्र है, जो उस क्षेत्र विशे क्रियाशीलन प्राण का दोतक है ।

4.3.1(i) प्राण (Prana)

यह प्राणमय कोश का वह भाग है, जो गले से लेकर वक्ष के निचले भाग तक फैला हुआ है। यह वक्ष स्थल के सभी अंगों यथा फेफड़े, हृदय आदि का संचालन करता है। यह श्वसन (respiration), रक्त संचालन (blood circulation), कंठ, स्वर तंत्र, अनु नलिका इत्यादि का संचालन करता है। इसकी दिशा

ऊपर की ओर है।

4.3.1 (ii) अपान (Apana)

प्राणमय कोश के इस भाग का विस्तार नाभि (nepal) से लेकर जननांग (gerital) तक फैला हुआ है। यह गुर्दा (kindney), मूत्राशय (urinal track) बड़ी ऑत (Large intestine), गुदा (anus) तथा जननांग (genital) को संचालित करता है। इस प्रकार मल, मूत्र अपान वायु की ऊर्जा है। स्त्रियों में गर्मस्य शिशु के जन्म की क्रिया इस क्रिया द्वारा सम्पन्न होती है। इसकी दिशा नीचे की ओर है।

4.3.1 (li) समान (Samana)

हृदय के निचली सीमा से नाभि तक का क्षेत्र समान वायु के अंतर्गत आता है। आशय यह, कि माह प्राण तथा अपान के मध्य में स्थित है। पाचन (digestion) तथा अवशोषण (absorption) की क्रियाएँ पूर्ण रूप में समान वायु के नियंत्रण में आता है। यकृत, आमाशय, पक्वाशय, छोती आँत तथा इससे संबंधित पाचक राषिर्ण इसके द्वारा ही नियंत्रित होती है। समान वायु की दिशा पाश्श्व दिशा में होती है।

4.3.1 (iv) उदान वायु (Udana) शरीर का शेष क्षेत्र यानि हाथ, पैर तथा सिर उदान वायु द्वारा क्रियाशील होते हैं। अर्थात् हाथ-पैर सम्पादित सारे कार्य उदान वायु द्वारा संचालित होते हैं। इसकी दिशा चक्रीय अथवा गोलाकार है ।

4.3.1 (v) वयान (Vyana)

इसके अंतर्गत पूरा शरीर आता है। यह तभी क्रियाशील होता है, जब शरीर को अतिरिक्त ऊर्जा स आवश्यकता होती है। आपातकाल में यह अन्य वायुओं की सहायता करती है, जो उन्हें अतिरिक्त शक्ति प्रदान करती है। यह उपर्युक्त चारों वायुओं पर नियंत्रण करती है तथा आवश्यकता पड़ने पर उन्हें संचालित करती है ।

प्राणमय कोश के अतिरिक्त पाँच उपप्राण हैं, जिनके द्वारा कार्य सम्पादित होता है।

1. कर्म-यह आँखों के क्रियाशीलन से संबंधित है। पलकों का गिरना-उठना इसके द्वारा ही सम्पादित होता है ।
2. नाग-हिचकी तथा डकार की क्रियायें नाग द्वारा सम्पादित की जाती है।
3. देवदत्त-जम्हाई लेना एवं सोना देवदत्त के अधिकार क्षेत्र में आता है।
4. कृकल-भूख-प्यास, छींक एवं खाँसी कृकल कार्य के अंतर्गत आता हैं।
5. घनंजय-मृत्यु के तुरंत बाद जब शरीर प्राण त्याग देता है, उसके कुछ समय बाद तक के लिए घनक क्रियाशीलन के अधिकार में शरीर का नियंत्रण होता है।

4.3.2 नाड़ी (Nari)

नाड़ियाँ प्राण के प्रवाह का मार्ग हैं। ये प्राणमय कोश की रचनाएँ हैं। इन्हें स्थूल रूप से देखा नहीं जा सक है। चिकित्साशास्त्र के अंतर्गत शरीर के विच्छेदन से हम जिन स्नायुओं या नाड़ियों को देखते हैं, यहाँ हम द नाड़ियों की चर्चा नहीं कर रहे हैं । हाँ, स्थूल शरीर की नाड़ियों को सूक्ष्म शरीर नाड़ियों की अभिव्यक्ति मानी जा सकती हैं। जिनकी कार्यपद्धति तथा कार्यक्षेत्र में समानता है।

शरीर की बहत्तर हजार नाड़ियों में तीन अत्यंत महत्वपूर्ण हैं, जिनकी विस्तृत चर्चा यहाँ की जा रही है ।

4.4 नाड़ियों में प्राण का महत्व (Importance of Prana in Nari)

4.4.1 इड़ा

यह नाड़ी मूलाधार चक्र के बायें भाग से प्रारंभ होती है, जो आज्ञा चक्र के बायें भाग में समाप्त होती है। इसकी प्रकृति शीतल होती है। इसे चंद्र नाड़ी भी कहा जाता है। इसका संबंध बायी नासिका रंध्र (nostril) से है। इसका संबंध चंद्रमा से है यह स्वभाव : मृदु , कोमल, ग्रहणशील तथा स्त्रैण है। स्थूल स्तर पर यह विचार शक्ति का पोषक है। अतः इसे चित्त शक्ति का वाहक भी कहते हैं। गहन, चिंतन-मनन के लिए इड़ा की क्रियाशीलता आवश्यक है। जब इड़ा नाड़ी कार्यरत् रहता है तो मनुष्य अधिक क्रियाशील, जागृत तथा अंतर्मुखी बन जाता है। विचार, बुद्धि, ज्ञान, स्मृति आदि के केंद्र पूर्ण स्पंदन में आ जाते हैं। इसके विपरीत मांसपेशियाँ शिथिल हो जाती हैं तथा शरीरिक कार्य स्थगित कर दिये जाते हैं।

इस प्रकार इड़ा नाड़ी कार्य शक्ति के ऊपर विचार शक्ति को प्रथमिकता देने वाली नाड़ी है।

4.4.2 पिंगला

यह भी मूलाधार चक्र के दाहिने भाग से मस्तिष्क तक जाती है। यह शरीर के दायी भाग में स्थित होता है। इसका संबंध दायीं नासिका रंध्र (nostril) से है। इसकी प्रकृति गर्म है। यह मूलाधार चक्र के दाहिने भाग से निकलकर अन्य चक्रों से होते हुए आज्ञाचक्र के दाहिने भाग तक जाती है। दायीं नासिका के क्रियाशील होने पर पिंगला नाड़ी से प्राण का प्रवाह तीव्र हो जाता है।

पिंगला का नियंत्रण ग्रह सूर्य है। अतः यह सूर्य नाड़ी के नाम से जाना जाता है। इसका स्वभाव उग्र, तीव्र क्रियाशील तथा पौरुषपूर्ण है। यह कार्यशक्ति का वाहक नाड़ी है। इस नाड़ी के क्रियाशील होने पर शक्तियाँ बहिर्मुखी हो जाती हैं तथा कर्मेन्द्रिय काम करने को तत्पर हो जाती है। अत: पिंगला नाड़ी को उपस्थिति में शारीरिक श्रम एवं क्रियाशीलता ठीक प्रकार से संपन्न होता है।

इस प्रकार पिंगला नाड़ी विचार शक्ति के ऊपर कार्यशक्ति को प्राथमिकता देने वाली नाड़ी है ।

4.4.3 सुषुम्ना

यह नाड़ी शरीर के मध्य में मेरुदण्ड (spinal cord) के समानांतर सीधी गुजरने वाली नाड़ी है। यह मूलाधार चक्र से आज्ञाचक्र तक सीधी जाती है। सामान्य तौर पर यह सुषुप्तावस्था में रहती है। इससे प्राण का प्रवाह नहीं होता है। यह इड़ा तथा पिंगला के संतुलन को स्थिति में आने के बाद सक्रिय होती है। इस स्थिति में इसमें बहने वाली प्राण शक्ति को आध्यात्मिक शक्ति कहते हैं। इसो मार्ग के खुलने पर कुण्डली जागृत होकर आरोहण करती है। कुण्डलिनी का आरोहण ही साधक का आध्यात्मिक विकास है।

प्राणायाम साधक का लक्ष्य है इड़ा और पिंगला में संतुलन लाना, तभी सुधुम्ना नाड़ी क्रिचाशील होगी। प्राणायाम को विधियाँ ही इसे इसके उद्देश्य की ओर ले जाती है। इड़ा और पिंगला साधक के पूरे व्यक्ति को प्रभावित करता है। साधक शारीरिक तथा मानसिक रूप से दृढ़ एवं संतुलित हो जाता है। उसके कर्म वाणों के अनुरूप व्यवस्थित हो जाते हैं।

यहाँ नाड़ियों के महत्व के अंतर्गत हमने इड़ा, पिंगला तथा सुषुम्ना नाड़ियों को जानकारो प्राप्त की। हमने जाना कि इड़ा तथा पिंगला विपरीत गुणों वाली नाड़ियाँ हैं। यदि किसी व्यक्ति में इड़ा प्रवल रहे तो वह विचारशील तो होगा, परन्तु कर्म के अभाव में आलस्य, तंद्रा एवं अकर्मण्यता का शिकार हो जायेगा, जो निराशा तथा अवसाद का

कारण बन सकता है। यदि पिंगला नाड़ी प्रबल रहेगा तो व्यक्ति अति उत्साही, अति क्रियाशील एवं महत्वाकांक्षी हो जायेगा। यह तनाव को जन्म देगा; जो भविष्य में बीमारियो का कारण बनेगा।

अत: उचित शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक विकास के लिए इड़ा तथा पिंगला का संतुलन आवश्यक है। यह प्राणायाम की साधना से ही संभव है।